आधुनिक रिक्शे

बिमल श्रीवास्तव

तिपहिया रिक्शा हमारे देश का एक लोकप्रिय वाहन है। भारत के लगभग प्रत्येक नगर में रिक्शे किसी-न-किसी रूप में अवश्य दिख जाएंगे। मुंबई जैसे कुछ नगरों में इन पर कुछ सीमा तक या पूर्ण रूप से प्रतिबंध है क्योंकि या तो इन्हें यातयात में बाधा पहुंचाने वाला वाहन या फिर मानव के श्रम पर आधारित क्रूर वाहन के रूप में पहचाना जाता है। इसके बावजूद अनेक स्थानों पर रिक्शा को एक प्रदूषणमुक्त, सुविधाजनक, सहज, सस्ता तथा सरलता से उपलब्ध वाहन माना जाता है।

एक अनुमान के अनुसार हमारे देश में लगभग 20 लाख रिक्शे हैं। किन्तु सम्भवतः इनकी वास्तविक संख्या इससे कई गुना अधिक है क्योंकि कोई अधिकृत रिकार्ड उपलब्ध नहीं है। माना जाता है कि अकेले दिल्ली में ही इस समय करीब 5 लाख रिक्शे चल रहे हैं, जिनमें से केवल 99,000 लाइसेंसशुदा हैं। स्पष्ट है कि हमारे देश में रिक्शों के माध्यम से 20 लाख से अधिक लोगों की गुज़र-बसर होती है।

रिक्शा शब्द जापानी भाषा के 'जिंरिक्शा' (जिं-मानव, रि-शक्ति, शा-वाहन) से बना है, जिसका अर्थ है मानव की शक्ति से चलने वाला वाहन। माना जाता है कि सर्वप्रथम वर्ष 1868 में रिक्शों का चलन आरम्भ हुआ था तथा शीघ्र ही वे वहां के पसंदीदा वाहन बन गए थे। हमारे देश में सम्भवतः रिक्शे सबसे पहले वर्ष 1868 में शिमला में तथा उसके बीस वर्षों के बाद कोलकाता में चले थे, जहां उनका उपयोग चीनी व्यापारियों द्वारा सामान ढोने के लिए किया जाता था। वर्ष 1914 में चीनियों ने इन्हें यात्री परिवहन के रूप में भी इस्तेमाल करना शुरू किया था। अगले कुछ वर्षों में वे देश के अन्य नगरों तथा दक्षिण पूर्व एशिया में तेज़ी से फैल गए।

रिक्शे हमारे देश के लगभग हर भाग में देखे जा सकते हैं। चाहे लखनऊ जैसी नवाबों की नगरी हो या फिर दिल्ली की व्यस्त गलियां हो, असम अथवा सुदूर उत्तर-पूर्व का गुआहाटी, दीमापुर या इम्फाल हो, महाराष्ट्र के औरंगाबाद, नागपुर, आन्ध्र का हैदराबाद अथवा तमिलनाडु का चेन्नै हो, हर जगह रिक्शे मिलेंगे। अन्तर केवल इतना होगा कि एक क्षेत्र के रिक्शे की कुछ अपनी अलग पहचान होगी जो दूसरे क्षेत्र के रिक्शे से थोड़ी भिन्न होगी। कहीं के रिक्शे हल्के, तो कहीं के भारी, कहीं संकरे तो कहीं चौड़े, कहीं के तेज़ चलने वाले, तो कहीं के शाही चाल से चलने वाले, कहीं हुड के साथ तो कहीं बगैर छत के, कहीं दो या तीन सवारी ले जाने वाले तो कुछ छोटे शहरों या गांवों में तो एक साथ छह-छह सवारी ढोने वाले देखे जा सकते हैं।

जहां लखनऊ के रिक्शों की सजावट, उन पर सजाए गए बेलबूटे या कभी-कभी उन पर लगे घुंघरू नवाबी दिनों की याद दिलाते हैं, वहीं गुआहाटी के रिक्शेवाले वहां की घनघोर बरसात तथा धूप से स्वयं को बचाने के उद्देश्य से रिक्शाचालक की सीट के ऊपर स्थाई अथवा अस्थाई रूप से एक आरामदायक छतरी या बरसाती छत-सी बना देते हैं। कोलकाता में तो मानव द्वारा हाथों से खींचे जाने वाले रिक्शे चलते हैं जिनके ऊपर बनी स्व.बिमल राय की फिल्म दो बीघा जमीन ने केवल

भारत ही नहीं बल्कि विदेशों तक में धूम मचा दी थी। वैसे मानवाधिकार समितियों तथा अनेक वर्गों के निरंतर विरोध के बाद प. बंगाल सरकार द्वारा अब इन रिक्शों पर प्रतिबंध लगाया जा रहा है।

लेकिन मुझे सबसे निराले रिक्शे हैदराबाद के लगे। उन रिक्शों में यात्रियों के बैठने के लिए अन्य रिक्शों के जैसी ऊंची सीट नही होती है, बल्कि वहां पर रिक्शे की फर्श पर ही गद्दी बना दी जाती है, जिस पर यात्री अपनी टांगें फैलाकर बैठते हैं। इस प्रकार यदि यात्री शरीर से थोड़ा भारी हो या फिर महिलाओं को उन रिक्शों पर बैठने का अभ्यास करना पड़ सकता है।

दिल्ली के अनेक भागों में तथा उत्तर भारत के कुछ नगरों में अब आधुनिक तकनीक पर आधारित रिक्शे आ गए हैं, जिनका विकास इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रांसपोर्टेशन पॉलिसी द्वारा विशेष अनुसंधान के बाद किया गया है। लोहे के पाइपों से बने ये रिक्शे हल्के, आरामदायक, कम परिश्रम से चलने वाले तथा अधिक सुरक्षित होते हैं। इनके भार में लगभग 30 प्रतिशत कमी लाई गई है जिससे अब उनका भार 80 किलो की बजाय लगभग 55 किलो रह गया है। इसके अलावा इनमें सीटों के नीचे यात्रियों का सामान रखने की भी समुचित जगह होती है। सर्वेक्षण से यह पता लगा है कि इन सुधारों के फलस्वरूप अब रिक्शावालों की आय 20 से 50 प्रतिशत तक बढ़ गई है।

वर्ष 2005 तक आधुनिक तकनीक वाले ऐसे एक लाख रिक्शे दिल्ली, भरतपुर, वृंदावन, चंडीगढ़, आगरा व जयपुर में चल रहे थे तथा उनकी संख्या बढ़ती जा रही है।

वैसे रिक्शे केवल भारत ही नही बल्कि विदेशों में भी, विशेष रूप से दक्षिण पूर्व एशिया में अति लोकप्रिय हैं। बांग्ला देश, म्यांमार, सिंगापुर (वहां इन्हें ट्राइशा कहा जाता है), मलेशिया, थाईलैण्ड, इन्डोशिया (स्थानीय नाम बेसाक), कम्बोडिया (स्थानीय नाम सीक्लो), वियतनाम (स्थानीय नाम सीक्लो) जैसे देशों में रिक्शों का खूब चलन है। उल्लेखनीय है कि दक्षिण पूर्व एशिया के रिक्शों का स्वरूप भारतीय रिक्शों से बिल्कुल अलग होता है।

उन स्थानों पर रिक्शों का उपयोग प्रायः बोझा ढोने तथा सैर-सपाटे के लिए किया जाता है। इसके अलावा उनका एक और उपयोग पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए भी किया जाता है। इस प्रकार अनेक युरोपी तथा अमरीकी पर्यटक टैक्सी की बजाय रिक्शे से सिंगापुर की सैर का आनंद लेते हैं। इनका किराया टैक्सी की अपेक्षा बहुत अधिक होता है। भारत के अलावा जहां रिक्शे सबसे अधिक प्रचलित हैं-वह है बांग्ला देश। वहां के ढाका, चिटगांव, सिल्हट, खुलना जैसे नगरों में तो रिक्शों का रेला-सा नज़र आता है। चीन में यद्यपि रिक्शों पर प्रतिबंध है परन्तु बीजिंग के पुराने इलाके हुटोंग में तथा कुछ अन्य क्षेत्रों में पर्यटन तथा अन्य कारणों से रिक्शे अभी भी चलते हैं।

अब तो अमेरिका, कनाडा तथा युरोप के कुछ देशों जैसे यू.के., डेनमार्क आदि में भी कुछ स्थानों पर रिक्शों का उपयोग मुख्यतः पर्यटन के प्रयोजन से किया जा रहा है। वहां इन्हें पेडीकैब कहा जाता है। ये रिक्शे वहां अत्यधिक लोकप्रिय होते जा रहे हैं, तथा वहां उनका उत्पादन भी किया जा रहा है।

मानव चालित तिपहिए रिक्शों की प्रमुख विशेषता उनका प्रदूषण मुक्त होना तथा छोटी यात्राओं के लिए अति सुविधाजनक वाहन होना है। किंतु रिक्शाचालकों के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक तथा तीव्र गतिगामी यातायात में बाधा उत्पन्न करने के कारण इनका विरोध किया जाता रहा है। इस प्रकार अब आवश्यकता इस बात की है कि कुछ सघन गलियों तथा सीमित क्षेत्रों में रिक्शों को चलने की अनुमति दी जाए और उन स्थानों पर चौपहिया वाहनों को अंदर प्रवेश न करने दिया जाए। इसके अलावा इन रिक्शों की बनावट में अभी और भी सुधार की गुंजाइश व आवश्यकता है। जैसे उनमें एक हल्का छोटा इंजिन लगा देना ताकि चढ़ाई पर तथा भार ज़्यादा होने पर चालक को कम श्रम करना पड़े, रिक्शे में अधिक गियर लगाना, मुड़ने के लिए प्रकाश के संकेत तथा पीछे के दृश्यों के लिए आइने लगाना इत्यादि। इन सभी सुधारों के फलस्वरूप रिक्शा चालकों के स्वास्थ्य सम्बंधी समस्याओं का भी समाधान हो सकेगा तथा रिक्शों के उपयोग को और भी अधिक लोकप्रिय बनाया जा सकेगा। ***(स्रोत फीचर्स)***